अथाष्टमोऽध्यायः

आठमाँ ब्रह्माक्सरनिर्देस अद्ध्याय

अर्जुन उवाच

किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं, किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते।। १

अर्जन बोल्ल्या

(सात सुवाल करे अर्जन नै)

[१]के वो 'ब्रह्म' [२]के अध्यात्म सै?, [३]क्याँ नैं 'करम' कहैं परसोतम?
[४]अधिभूत' बी बताया के सै, [५]'अधिदैव' कह्या के जावै सै?।। १

अधियज्ञः कथं कोऽत्र, देहेऽस्मिन्मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं, ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः।। २

[६]'अधियग्ग्य' अधिष्ठाता यग का, कोण किसा इस तन मैं हो सै?
'मधु' मिठास, राग भाव नैं, मारणिये हे, [७]अन्त समै मैं।।
दुनियाँ तैं जाणै कै बखतैं, किस तह्रियाँ वैं जाणैं तन्नै।
काब्बू मैं कर लें जो मन नै?।। २

श्रीभगवानुवाच

अक्षरं ब्रह्म परमं, स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो, विसर्गः कर्मसंज्ञितः।। ३

स्रीभगुवान् बोल्ले

(उनका उत्तर दिया किसन नै)

[१]'अक्सर' अन्व्यय, अविकारी जो, 'परम' सभी कै पाच्छै रहँदा।
ततव 'ब्रह्म' वो कहलावै सै, [२]स्वभाव आपणा होणा जो सै।।
'अध्यात्म' कुहावै वो दुनियाँ मैं, 'सु+अ=स्व' उत्तम आप्पा लाग्गै।
काया अर उस मैं जीवात्मा, काया, इन्द्री बाह्य भीतरी।।
भिन्न रूप मैं जीव चलावै, खुद होणै नै 'अध्यात्म' कहैं।

[३]'अध्यात्म' भाव मैँ जड़ चेतन, जो अस्तित्व जगत् मैँ बणदे।
उन नै प्रगट करणियाँ होवै, दान वस्तु का होम 'करम' सै।। ३

अधिभूतं क्षरो भावः, पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र, देहे देहभृतां वर।। ४

[४]होणा, करण, कर्म वस्तु तैँ, भूत जगत् 'क्षर' नाशी होवै।
[५]थोत्थे, पोल्ले इन भूत्ताँ नै, निज प्रकास तैँ सै जो भरदा।।
चिमकावै अर जो वो हो सै, 'पुरुष' आतमा इत 'अधिदैवत'।
[६]मैँ सूँ 'यग्ग्य-करम स्वामी', सृष्टीरूपी चाल्है जो यो।
इस तन मैँ, काया धरत्याँ मैँ, 'वर' हे चाहण जोग्गे अर्जन।। ४

अन्तकाले च मामेव, स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं, याति नास्त्यत्र संशयः।। ५

(अन्त समै का भाव प्रबल सै)

[७]अन्त समै मैँ अर मेरा ए, सिमरण करदा त्याग देह नै।
जो जावै, वो 'मैँ' ए हो ज्या, नाँ सै इस मैँ कोए सँस्सै।।५

यं यं वापि स्मरन् भावं, त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय, सदा तद्भावभावितः।। ६

जो-जो बी या भाव सिमरदा, छोड्डे आक्खर काया नै सै।
वो-वो ए भाव सदा पावै, उसै भाव तैँ रँग या, अर्जन।। ६

तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्, मामेवैष्यस्यसंशयम्।। ७

(सदा सुमिरदा मन्नै लड़ तैँ)

इस कारण सब बखताँ मैँ तैँ, मेरा सिमरण कर अर लड़ तैँ।
मन्नै अर्पित मन बुद्धी कर, मन्नै ए जाः गा, नाँ साँसा।। ७

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं, याति पार्थानुचिन्तयन्।। ८

(अन्त समै के करणाँ चहिये)

इत-उत जान्दै मन नै अर्जन, एक बिसै पै घेर-घार कैँ।
ओर कितै नाँ जान्दै मन तैँ, चिन्तन, मनन सदा वो करदा।।
'परम' सेस जो सब तैँ ऊप्पर, जगत् पुरी नै भर कैँ स्थित उस।
'दिव्य' प्रकासित द्युतिमय सत नै, पावै सै हे पूत प्रिथा के।। ८

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद् यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।। ९

'कवि' मेधावी, सर्वग्य, पुराणा, जग नै अनुसासन मैँ रखदा।
सूक्षम तैँ बी भोत्तै सूक्षम, कारण सब नै धारण करदा।।
मन नाँ जिस नै सोच सकै अर, सूरज-सा अति तेजोमय सै।
छा कैँ जग नै दुखी करणियै, अन्धेरै तैँ दूर घणा सै।
अनुगत हो कैँ उस नै सुमिरण, अर्जन, माणस करदा जो सै।। ९

प्रयाणकाले मनसाचलेन, भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्, स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।१०

मरणसमै नाँ बिचळै मन तैँ, परमेसर मैँ भक्ती रखदा।
प्राणेन्द्रिय मन कैँ निग्रह की, ताकत पा भौहाँ कै बीच्चूँ।
प्राणाँ नैँ ले ज्या अर थिर कर, भली तह्याँ जो स्थित हो माणस।
वो उस परम पुरुस नै पावै।। १०

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति, विशन्ति यद् यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति, तत् ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये।। ११

('ॐ' अक्सर का महत्त्व)

जिस नै 'अक्सर', अविकारी अर, आप्णी स्थिति तैँ नाँ ए बिचळ्या।
बेद जाणदे लोग बतावैँ, मिल ज्याँ जिस मैँ लगे जतन तैँ।
नाँ सै आसक्ती जिन कै मन मैँ, नहीँ रँगे दुनियाँ कै रँग मैँ।
जिस की चाहत रखदे मन मैँ, ग्यान पाण की रहणी रहँदे।
वो तन्नै पद अक्सर ऊँच्चा, थोड़े सबदाँ मैँ बोल्लूँगा।। ११

सर्वद्वाराणि संयम्य, मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।। १२

कायापुर के नो दरवज्जे, आतम राजा इन तैँ आ जा।
स्थूल'र सूक्सम आठ काज ले, सात दुरज्जे सब कै सिर मैँ।।
आँख, नाक, कान्नाँ के दो-द्दो, चाक्खण बोल्लण का सै एक्कै।
मल मूत्तर तज एकेक रहै, त्वचा मँढी सै सारी नगरी।।
नरम गरम का ग्यान करावै, पाँव चलावैँ काया-पुर नै।
दो कर करदे कारज सारे, मन इन सार्याँ तैँ ए जुड़ कैँ ।।
कारिन्दा यो भाज्जा-दोड़ी, कर कैँ ल्यावै इन्द्रिय-अनुभव।
सबै समेट्टचै बुद्धी धौरै, बुद्धी मन्त्री इन का अनुभव।।
फळ कै रूपै ले ज्या कर कैँ, जीवराज कै निकट परोसै।
जो छाया रहँदा बुद्धी पै, इस तैँ इन नै आप्णा मान्नै।।
कर्ता, भोक्ता मान स्वयं नै, बँध्या फँसै सै बिसयाँ मैँ न्यूँ।
सभी दुरज्जे बँद कर मन नै, रोक बिठा कैँ बुद्धी कै पाह्।।
हृदयकमल मैँ, उस तैँ ऊप्पर, ब्रह्मरन्ध्र मैँ चढ़ा प्राण नै।
टिक कैँ माणस आत्मसमाधी, योग धरण मैँ स्थित हो अर्जन।। १२

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म, व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन् देहं, स याति परमां गतिम्।।१३

'अक्सर' अविकारी अविनासी, ब्रह्म बतावै सै जो एक्कै।
'ओम' सबद उच्चारण करदा, मेरा सुमरण करदा जो सै।
जावै जग तैँ तजदा काया, परला पद वो माणस पावै।। १३

अनन्यचेताः सततं, यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ, नित्ययुक्तस्य योगिनः।। १४

(परमात्मा कै सुमिरण का फळ)

नाँ ओर कितै मन नै लान्दा, बिना रुकै जो मन्नै सुमरै।
नित्त, हमेसा, जीवै जिब तईँ , मन नै रोक सदा जो राक्खै।

उस योगी नै मैँ सुलभ रहूँ, पिरथा भूआ के सुत अर्जन।। १४

मामुपेत्य पुनर्जन्म, दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः, संसिद्धिं परमां गताः।। १५

मन्नै पा कैँ फेर जलम जो, दुख का घर सै, सदा रहै नाँ।
नाँ सैँ पान्दे परब्ब्रह्ममय, होँगे जो मोक्ष परम पा कैँ ।
आवागम कै बन्धन तैँ छुट।। १५

आब्रह्मभुवानाल्लोकाः, पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय, पुनर्जन्म न विद्यते।। १६

कारण-कार्य भाव मैँ आए, ब्रह्मा जी के लोक्काँ तक सब।
फेर-फेर सैँ आवैँ-जावैँ, मन्नै पा, पर, कुन्ती के सुत।
अर्जन, फेर जलम नाँ होन्दा।। १६

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां, तेऽहोरात्रविदो जनाः।। १७

(ब्रह्मा के दिन अर रात्री)

सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग, बार हजार बीतदे दिन हो।
ब्रह्मा जी का जाणैँ पाच्छै, युग हज़ार वा च्यार पहर की।
रात जाणदे दिन-रात्ताँ के, जाणनियैँ जो ग्यान्नी जन सैँ।। १७

अव्यक्ताद् व्यक्तयः सर्वाः, प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते, तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके।। १८

रात्री मैँ ज्यूँ सब कुछ सोवै, गहरै तम मैँ साफ किमे नाँ।
ब्रह्मा के बी रात्रिकाल मैँ, होन्दा परगट साफ किमे नाँ।।
व्यस्टि रूप मैँ अङ्गसँग सब, प्रगट पदारथ व्यक्ति बणैँ सैँ।
रात बीतदे ब्रह्मा जी की, दिन जिब ऊग्गै ब्रह्मा जी का।।
दिन कै बीत्तैँ रात पड़्यै पै, लीन सबै सैँ हो ज्याँ उस मैँ।
जो वो सोया ब्रह्म जगत सै, 'अव्यक्त' नाम की निद्रा मैँ।। १८

भूतग्रामः स एवायं, भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ, प्रभवत्यहरागमे।। १९

हो कैँ, जा कैँ, ओज्जू होवैँ, न्यूँ चक्कर जिन का चाल्है सै।
स्रिस्टी जिन तैँ होवै, उन सब, भूत्ताँ का यो घाण समूच्चा।।
हो कैँ न्यूँ, हो-हो कैँ फिर-फिर, मिट कैँ उस मैँ मिल ज्यावै सै।
रात पड़्यै पै बेबस आण्णै, अग्ग्यान, काम करमाँ कै बस।
बारम्बार जलम न्यूँ ले सै।। १९

परस्तस्मात्तु भावोऽन्यो, ऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु, नश्यत्सु न विनश्यति।। २०

(अव्यक्त प्रक्रिति तैँ ऊप्पर कुछ सै)
न्यारा उस तैँ भाव ओर सै, व्यक्त न होन्दा इन्द्रिय मन तैँ।
ऊप्पर उस अव्यक्त बीज तैँ, भाव परन्तू एक ओर सै।।
सब भूत्ताँ मैँ सत् स्वरूप मैँ, 'व्यक्त' प्रगट वो सदा रहणियाँ।
जो वो सारे नस्ट होणिये, भूत्ताँ मैँ रह खतम न होवै।। २०

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्, तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते, तद् धाम परमं मम।। २१

जो भाव अतीन्द्रिय, अविनासी, बोल्ल्या वा कहँदे 'परमगती'।
जिस नै पा नाँ उल्टे आवैँ, वो ए रूप परम सै मेरा।। २१

पुरुषः स परः पार्थ, भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि, येन सर्वमिदं ततम्।। २२

(भगती तैँ वो पाया जा सै)
दुनियाँ-पुर नै पुर कैँ, भर कैँ, उस मैँ बसदा, उस तैँ ऊप्पर।
पूत प्रिथा के अर्जन, वो सै, ओर किसै की नाँ होणाळी।
भक्ती तैँ पाया जा सकदा, जिस कै भीत्तर भूत सबै स्थित।
जिस नै सारी दुनियाँ या सै, अस्तित्व, स्फुरण तैँ बणा भरी।। २२

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं, वक्ष्यामि भरतर्षभ।। २३

(मरण बखत सैँ दो तह्रियाँ के)
जग तैँ जिस काळ गए योगी, नाँ आवैँ, अर करम करणिये।
वापस आवैँ भरत बँस के, अर्जन, इब वो काळ कहूँ सूँ।। २३

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः, षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति, ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः।। २४

यग्य करम मैँ बळदी अग्गी, तारयाँ की जो छाँह् मैँ होवै।
रात्रिकाळ का अन्त जिबै हो, ऊग्गै जोत प्रकासित सूरज।।
चान्द्र मास का सुकल पकस हो, छह भीत्रै उत्तर मैँ सूरज।
इसै समै मैँ बिदा जगत् तैँ, होणै आळे ब्रह्म-उपासक।
कार्य ब्रह्म नै क्रम तैँ पावैँ।। २४

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः, षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्, योगी प्राप्य निवर्तते।। २५

धूम्माँ उट्ठै, बुझी आग हो, रात समै मैँ सूरज बी नाँ।
चन्दा बी नाँ, रात अँधेरी, एक्कम तैँ ले मावस ताहीँ।।
क्रिसण पकस हो, भीत्रे छह हौँ, सूरज जिब दक्खण मैँ चाल्है।
इसै समै मैँ गया लोक तैँ, यग्ग्य करै अर नौँम खोद कैँ।।
जन-सेवा नै किमे बणावै, सही जघाँ पै, सही बखत पै।
दान करम मैँ रोक्के राक्ख्यै, मन आळा योगी, चन्दर की।।
ज्योती नै पा, हळकी-हळकी, ग्यान चाँदणी, घटदी-बढ़दी।
नाँ बी होवै, उस नै पा कैँ, करम फळाँ नै, भोग आदमी।
तम मैँ लोट्टै सै रै अर्जन।। २५

शुक्लकृष्णे गती ह्येते, जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्तते पुनः।। २६

धोळी, काळी गति सैँ दो ये, ग्यान जोत, अग्ग्यान अँधेरा।

जिद तैँ दुनियाँ, तद तैँ मान्नी, एक ग्यान तैँ बन्ध तोड़ कैँ।
मुक्ती पा नाँ फँसै दुबारा, दूज्जी गति अग्ग्यान अँधेरा।
उस नै पा कैँ फँसै फेर सै।। २६

नैते सृती पार्थ जानन्, योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात् सर्वेषु कालेषु, योगयुक्तो भवार्जुन।। २७

नाँ ये गति दो अर्जन, जाणै, योगी मोहित होवै कोए।
इस कारण सब बखताँ मैँ तैँ, एकाग्गरचित्त हो कैँ फळ की।
इच्छा छोड करम कर अर्जन।। २७

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव, दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा, योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्।। २८

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्मयोगो नामाष्टमोऽध्यायः।।८।।

(इस ग्यान का महत्त्व)

वेद पढे जो भली तह्हाँ हौँ, यग्य करे हौँ सर्धा, बिधि तैँ।
तन के मन के कस्ट तपे हौँ, दान करे हौँ देस काल नै अर।।
गुणी पात्र नै सोच समझ कैँ, उन कै पुन का फळ जो बोल्ल्या।
पाच्छै छोड्डै सारे नै वो, या जाण समझ कैँ सै योगी।
परला उत्तम पद वो पावै।। २८

स्रीमती सीत्तादेब्बी अर स्रीस्रीनिवास सास्तरी कै बेट्टै सिवनारायण
सास्तरी कै हरियाणी भास्सा कै गीत्तायन काब्ब्यभास्य मैँ
आठमाँ अध्याय पूरा होया।।८।।

पूर्वसलोकयोग ३१० + २८ = ३३८